SHIKSHA SAMVAD
International Open Access Peer-Reviewed & Refereed
Journal of Multidisciplinary Research
ISSN: 2584-0983 (Online)
Volume-1, Issue-3, March- 2024
www.shikshasamvad.com

" महिला विकास कार्यक्रमों के मार्ग में आने वाली बाधायें एवं समस्याए"

कु0 रूबी
शोधार्थिनी, शिक्षाशास्त्र
श्री वेंकटेश्वरा विश्वविद्यालय
गजरौला (अमरोहा) उ0प्र0

डॉ0 सुशील कुमार
शोध पर्यवेक्षक
श्री वेंकटेश्वरा विश्वविद्यालय
गजरौला (अमरोहा) उ0प्र0

भारतीय स्थितियों में जो कुछ भी महिला सुरक्षा अधिकार क्षेत्र में विचारणीय है, उसकी परिधि व सीमाएँ संवैधानिकता व विधान ने परिभाषित व निर्धारित कर रखी हैं। भारतीयता के ऊपर यह आरोप है कि सिद्धांत रूप में जो कुछ मान्य है, वह व्यवहारिक रूप में सामान्यता पालनीय नहीं बनता। कारण क्या है? क्यों नहीं वह इच्छा शक्ति? क्या व्यवस्थापिका व न्यायपालिका के विविध विशिष्ट क्षेत्र होने के कारण तो यह समस्या नहीं है।

यह तो अब विचारणीय व चिन्तनीय विषय हो गया है कि स्वतंत्रता के पचास वर्षों में संवैधानिकता की सदाशयता व इसके उद्देश्यों को व्यवहारिकता में क्रियान्वयन नहीं मिला। हो सकता है कि शासन तन्त्र से सम्बद्ध कार्यपालिका का प्रशासन तन्त्र इतनी प्रभावी भूमिका नहीं निभा सका, जिसकी इससे अपेक्षा थी। इस समस्या का गहन विश्लेषण करने की आवश्यकता क्या है और प्रशासनिक व्यवस्था के संदर्भ में इस तथ्य को विवेचित करना विषय संदर्भ का भाग है।

प्रत्येक संगठन का अपना एक उद्देश्य होता है, जिसका अपना एक तन्त्र होता है, निर्धारित होता है और उसकी प्रति के लिए मानवीय व भौतिक साधन होते हैं और इन सबसे मिलकर जो संकल्प शक्ति रूप प्रेरणा होती है, वह उद्देश्य को प्राप्ति के लिये उत्प्रेरित करती रहती है, यही

संगठन की प्राणवायु होती है। जिस उद्देश्य की प्राप्ति को तकनीकी व लौकिक भाषा में उत्पादकता कहते हैं।

किसी भी संगठन की सफलता मानव संसाधनों की कार्य–शक्ति व क्रियाशीलता पर निर्भर करती है जो कि उत्पादकता के उद्देश्य व लक्ष्य को यथार्थता में परिवर्तित करता है और यह उत्पादकता ही समृद्धि में बदल जाती है।

इस हेतु को प्राप्त करने केलिये आवश्यकता है व्यवस्थित/संगठित एवं सहप्ररित/प्रेरणादायक कर्मठ कार्यकर्ताओं के दल की जो एकत्व की भावना से प्रवृत्त होकर कार्य करें।

सारी स्थितियाँ या परिस्थितियाँ व्यक्तिगत व परिवेशगत होती हैं। यदि संगठन का काख्मक ढाँचा बुद्धिमत्तपूर्ण अपने समस्त साधनों व संसाधनों का पूर्ण उपयोग करता है और कार्य शक्ति में बदल देता है, तो संगठन सफल कहलाता है और यदि संगठन अपने ही दबाव के भार के नीचे दब जाता है, तो वह संगठन काल के प्रवाह में बह जाता है और वह अस्तित्वहीन हो जाता है, केवल नाम मात्र के लिये विद्यमान रहता है। जो भी गूढ़ता प्रतिद्वन्द्वता, कठिनाईयाँ कर्मक्षेत्र में आती हैं। उनका सामना करना ही संगठन की प्रशासनिक कुशलता है। किन्तु जहाँ समस्याओं के सामने संगठन नतमस्तक हो जाये, वहाँ समस्याओं के निवारण के स्थान पर साधनों में व संगठनात्मक कार्य प्रणाली में ही दोष खोजने का औचित्यहीन अभ्यास प्रारम्भ हो जाता है, जो पिष्ट पोषण क्रिया के समान कहीं पर किसी को किसी भी निर्णय पर नहीं पहुँचाता।

किसी ने इस संदर्भ में सही कहा है कि हर संगठन की यही समस्या है, जिसकी हर समय पुनरावृत्ति होती है कि जब परिवेशगत चुनौतियों के सामने संगठनात्मककार्य–कौशल अपने घुटने टेक देता है, तो फिर समस्याओं की ओर ध्यान आकृष्ट कर दिया जाता है, जो केवल एक पालयनवादी मनोवृत्ति है।

वे विभिन्न कारण क्या है? जो संगठन की क्रियाशीलता की गुणवत्ता व गुणात्मकता को प्रभावित करती हैं और अप्रत्याशित परिणामों के लिये उत्तरदायी हैं। ये कारण अनेक हैं, उनको निम्नांकित रूप से वख्णत किया जा सकता है–आन्तः संगठनीय समस्याएँ हैं, जो घरेलू संगठन की समस्याएँ हैं, वे कार्य क्षमता व कार्य परिणाम को प्रभावित करती हैं, क्योंकि अतिरिक्त कार्य माँ नियोजितों के प्रयत्न, संसाधन, क्षमता व समय पर विपरीत प्रभाव डालते हैं।

1. कार्य स्थितियाँ– अवांछित व बेकार कार्य स्थितियाँ केवल नियोजित को पहिये में अटके अवरोध के समान ही महसूस करने पर विवश करती हैं। जहाँ कार्य स्थितियाँ स्तरहीन होती हैं व संतोषप्रद नहीं होतीं, वहाँ पर नियोजित श्रम साधक अपनी पूरी क्षमता से कार्य करने में रूचि नहीं लेता है। वह अपने को संगठन का भाग नहीं मानता है।
2. नियोजित श्रम व कखमयों का चयन जब स्तरहीन व दोषपूर्ण होता है, तो कार्य शैली व क्षमता प्रभावित होती है।
3. यदि संगठन का यह इतिहास रहे कि वह स्तरहीन कार्य क्षमता को सहन करता है,तो वहाँ कर्मी स्तर का कार्य करने को प्रोत्साहन नहीं मिलता और जो ईमानदार, सत्यनिष्ठ व कर्मठ कार्यकर्त्ता हैं, वे अलग–अलग पड़ जाते हैं। स्थिति यह हो जाती है कि जब बसन्त ऋतु में मेंढ़क टर्राने लगें, तो बुद्धिमान कोयल चुप हो जाती है, कयोंकि वह जानती है कि इसका सम्मान करने वाले नहीं हैं। इसी प्रकार कर्मठशील व्यक्ति भी चुपचाप रहते स्तरहीन कार्य को करते देखते रहते हैं। जब भी कोई नया वयवस्थापक आकर नयी स्फूखत से काम करना चाहता है, स्तरहीनकर्मी उसके लिये समस्याएँ खड़ी करते हैं और संगठनात्मक उद्देश्य की प्राप्ति एक दुःस्वप्न हो जाता है।
4. कार्य संस्कृति की कमी व आदर्श कार्य मानकों की कमी से भी स्तरहीन कार्य पूर्णता को प्रोत्साहन मिलता है। जैसे क्रियाशील कार्य दल होगा, कार्य परिणाम वैसे ही प्रभावित होंगे। जहाँ कार्य संस्कृति का अभाव होता है, वहाँ कार्य की उपादेयता, पूर्णता व गुणवत्ता पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता है। औद्योगिक अशांति एवं माँगों व नारों के बीच कार्य प्रभावित करने वाले कर्मी संगठन पर बोझ होते हैं और उनको कार्य सम्पादनता से जोड़ने की महती आवश्यकता होती है। किन्तु आलस्यपूर्ण स्थितियां कार्यक्षमता संवर्धन की ओर प्रवत्त नहीं करती हैं।
5. कर्मियों के स्वास्थ्य सम्बंधी सुविधाओं की स्तरहीनता व अनुपयुक्तता भी संगठनात्मक कार्यविधि को प्रभावित करने वाला कारक है।
6. प्रेरणादायक भूमिकाओं का अभाव।
7. मानसिक स्वास्थ्य सम्बंधी समस्याएँ, कखमयों का व्यसनी होना, मादक पदार्थों के सेवन की समस्या।

8. जो परिस्थितियाँ मानसिक दबाव उत्पन्न करती हैं और कार्य–क्षमता को प्रभावित करती हैं, उनकी प्रचुरता व बहुलता। यह सही है कि सब कार्यों में मानसिक दबाव की स्थितियाँ होती हैं, किन्तु कुछ कार्य क्षेत्रों में इनकी अधिकता होती है, जो कार्य क्षमता को प्रभावित किये बिना नहीं रह सकती।

9. बुद्धिमत्ता के अनेक रूप होते हैं। किसी संगठन के नेतृत्व में यन्त्रवत् बुद्धिमत्ता होती है, जोकि तकनीकी क्षेत्र में बहुत अच्छी हो सकती है। किन्तु मानवीय प्रशासनिक कार्य क्षेत्र में इतनी प्रभावी नहीं होते, जिससे मानवीय संसाधनों का समुचित लाभ संगठन को नहीं मिल पाता।

10. स्वार्थी प्रवृत्ति जो भ्रष्टाचरण की जन्मदायिनी है। उससे भी कार्यशैली प्रभावित होती है।

11. उचित नेतृत्व का अभाव भी संगठन की कार्यशैली को प्रभावित करता है। जिस संगठन का नेतृत्व जितना दूरदख़शता से भरा होता है, उस संगठन की उत्पादकता व उपादेयता उतनी ही उच्च कोटि व क्षमता के अनुरूप होती है और सदा लाभप्रद परिणाममूलक स्थितियाँ बनती हैं। नेतृत्व ही संगठन का प्रेरणादायक स्त्रोत होता है। जहाँ नेतृत्व के स्थान पर प्रशासनिक पद प्रधानता अधिक होती है, वहाँ कार्य के प्रति उदासीनता बनी रहती है और कर्त्तव्य–परायणता समय की प्रतिब(ता से जुड़कर सामान्य स्तर की हो जाती है, किन्तु जहाँ समय के विपरीत उत्पादकता के प्रति प्रतिब(ता की भावना होती है, वहाँ समय गौण हो जाता है। संगठन उसके लक्ष्यों से जो आत्मीयता का भाव जुड़ता है, वही संगठन की सफलतामूलक भाव होता है। यह सब प्रशासनिक गुणवत्ता पर निर्भर होता है।

भारतीय प्रशासन तन्त्र व महिला विकास कार्यक्रम–भारतीय संवैधानिकता ने नारी को समान विधिक अधिकार दिये और नारी के प्रति लिंग आधार पर कोई भेदभाव नहीं करने का प्रावधान किया। नियोजन के अधिकारों की समानता का भी प्रावधान किया। यह प्रतिज्ञा भी की कि भारत के प्रत्येक नागरिक को एक व्यक्ति के रूप में पूर्ण सम्मान दिया जायेगा और एक व्यक्ति के रूप में उसे सामाजिक, आख़थक व राजनीतिक न्याय दिया जायेगा और विधिक रूप से सब समान होंगे और किसी के साथ भेदभाव नहीं किया जायेगा।

इस संदर्भ में भारतीय समाज के जो निर्बल घटक थे, जिनका जातिगत शोषण हुआ था, उसको समुन्नति के आरक्षित साधन उपलब्ध कराने का प्रावधान भी संविधान में किया गया।

इसके अतिरिक्त भारतीय समाज में जो अशक्त घटक हैं, उनके उत्थान के लिये भी राज्यों को नीतिगत निर्देश दिये कि वे उनको उत्थान के साधन उपलब्ध करायें, इस नीति को समाज कल्याण का नाम दिया गया। महिला वर्ग को भी इस शक्तिहीन/निर्बल/कमजोर वर्ग के साथ रखा गया, जिसमें भिक्षुक, वृद्ध व बाल श्रमिक, अक्षम, विकलांगों को रखा गया। इस वर्ग का 'कल्याण' राज्यों की इच्छा शक्ति पर संसाधनान्तर्गत सीमा में अपेक्षा के आधार पर किया गया। नारी वर्ग को सामाजिक व आखथक दृष्टि से समुन्नत करने के लिये अनुदान अल्प ब्याज पर ऋणादि की व्यवस्था की गई।

प्रशासन व राज्य –

हर राज्य की जो केन्द्रीय/प्रान्तीय/प्रादेशिक सरकार बनी, उसके राजनीतिक सत्ता समीकरण के आधार बनते बिगड़ते रहे। किस प्रकार बहुमत को अपने साथ रखा जाये और हर प्रयास का राजनीतिक मत एकत्रीकरण का लाभ मिले, इस सत्ता दर्शन से सारी व्यवस्था संचालित होती रही।

राजनीतिक इच्छाशक्ति को पहचान कर शासन की कार्यपालिका ने वह सब कुछ किया जो कि राजनीतिक लाभ की स्थितियाँ बनती रहीं। इस प्रकार संविधान का राजनीतिकरण हो गया और संविधान का मूलभूत ढाँचा व स्वरूप ही बदलकर रह गया। सामाजिकतावाद में व्यक्तिवाद पिस कर रहा और व्यक्ति से अधिक महत्वपूर्ण समाज नहीं, अपितु दलगत राजनीतिक समाज हो गया। इसकी चपेट में संवैधानिक आखथकता आ गई और व्यक्ति को समान समोन्नति के साधन उपलब्ध नहीं हो पाये और प्रतिभा सामान्यता के जंजाल में फँसकर विवश हो गई। आरक्षण के नाम पर प्रशासनिक जो तन्त्र तैयार हुआ, उसका राजनीतिक दर्शन अधिक महत्वपूर्ण था, न कि राष्ट्रीय दृष्टिकोण। फलस्वरूप देश का जो प्रशासनतन्त्र था, उसमें भ्रष्टाचार का श्रीगणेश हो गया। प्रशासनतन्त्र का पहिया भ्रष्टाचार की चिकानाई पाकर ही गतिमान हुआ। श्री राजीव गांधी की सहज सत्य स्वीकारोक्ति कि विकास के लिये जो एक रुपया आवंटित होता है, उसमें से केवल 15 पैसे का ही लाभ जनमानस तक पहुँचता है और 85 पैसे प्रंशासन की भेंट चढ़ जाता है।

नारी विकास व प्रशासनिक अर्हताएँ तथा दोषपूर्ण नीतियाँ

नीतिगत रूप में स्वतंत्र भारत में जनकल्याण के साथ महिला कल्याण को भी जोड़ा गया किन्तु न तो इसकी व्याख्या की गई और ना ही लक्ष्य ही तय किये गये, समय सीमा ही तय की

गई और ना ही लक्ष्य प्राप्ति में प्रतिब(ता व उत्तरदायित्व के क्षेत्र में कुछ किया गया। लक्ष्य भेदन जो भी था, वह समय की गति के साथ चलता। स्वतंत्रता के उत्साह में सामुदायिक विकास योजनाएँ बनाई गई जिला परिषदों को विकास का उत्तरदाहियत्व दिया गया, जो पूर्णतया प्रशासनिक कल्याण के नाम पर योजना राशि का समुचित लाभ सम्बन्धित को नहीं मिल पाया। महिलाएँ भी अपवाद स्वरूप नहीं रहीं। महिला कल्याण भी स्वप्न ही रहा, एक यथार्थ नहीं बन सका।

नीतिगत परिवर्तन हुआ। समाज कल्याण पर सामाजिक न्याय दर्शन का बोलबाला हुआ, किन्तु सामाजिक न्याय क्या है? इसके क्या लक्ष्य हैं? क्या उद्देश्य है? क्या प्रशासनिक व्यवस्था है? क्या सामाजिक संगठन हैं? कुछ भी परिभाषित, रेखांकित व चिंहित नहीं हो सका। मानव कल्याण व विधिक न्यायिक व्यवस्था दोनों अलग–अलग सिद्धान्त व प्रत्यय माने गये। न्याय का संदख्रभत विधि–व्यवस्था व न्यायिक व्यवस्था से लिया गया, जिसका क्षेत्र न्यायालय रहा न कि समाज का वृहत मानवीय कुम्भ क्षेत्र। इस प्रकार समाज व न्याय दो अलग–अलग शब्दों को जोड़कर जो व्यवस्था बनाई गई, जिसके मंत्रालय ही अलग–अलग रहे। न्याय का अर्थ विधि व्यवस्था से सम्बद्ध पुलिस अभियोजना व न्यायालय तथा कानून की क्रियान्विति से किया गया। 'समाज' को मानव से जोड़कर मानव संसाधन मंत्रालय बनाकर उसमें ही शिक्षा विस्तार को जोड़ दिया। समाज कल्याण से समाज के कमजोर वर्गों से सम्बद्ध योजनाओं को जोड़ा। इस प्रकार सामाजिक न्याय दर्शन का अर्थ जो समाज में व्याप्त असमानता व विषमता को दूर कर समरसता का समाज बनाने का है, उस पर किसी ने ध्यान नहीं दिया। न्याय का अर्थ सबको उन्नति के अवसर मिलें और सामाजिक स्थिति, पद, जाति सम्प्रदाय, धर्म व लिंग के आधार पर विधिक/ सामाजिक आख्रथक क्षेत्र में कोई भेदभाव व्याप्त न हो, सबको राज्य समान सुरक्षा का भाव दे, समाज का संरक्षण सबको समान रूप से मिले, गरीब को साधन मिले– किन्तु यह सब कुछ भी नहीं हुआ। प्रजातांत्रिक शासन प्रणाली में जहाँ व्यक्ति को सर्व महत्वपूर्ण होना चाहिए था, वह राजनीतिक सत्ता–लौलुपता का शिकार हो गया और वादों की वंचकता व सत्ता के भय से एक 'सत्तावादी' व्यवस्था बन गयी, जिस पर जो आरूढ़ हुआ, उसने अपना राजनीतिक स्वार्थ सत्ता समाज बना लिया और भारतीय सामाजिकता व सामाजिक भारतीयता तथा भारतीय राष्ट्रीयता को भुला दिया। व्यवस्थापिका ने नीति, उद्देश्य व लक्ष्य निश्चित रूप से स्पष्ट नहीं करने के कारण कार्यपालिका जो पहले ही नौकरशाही पर पूर्णतया निर्भर हो गई थी, वह भी दिशाहीन हो गई और प्रशासनिक व्यवस्था, जो कार्यपालिका की थी, उसने 'शोषण' के स्त्रोत मानव कल्याण

की स्पष्ट धारणा के नाम पर खोल दिये। तभी दुःखी होकर स्वर्गीय श्री राजीव गांधी ने कहा था कि देश के विकास की राशि का 85 प्रतिशत तो जनकल्याण के लिये पहुँचा ही नहीं, केवल 15 प्रतिशत का लाभ मिलता है, जो कि नगण्य है और परिणाम मूलक नहीं है, जिससे गरीबी व शोषण की रेखा पर रह रहे जन कभी विकास से क्षितिज की ओर मुँह ऊँचा करके देखने का साहस ही नहीं जुटा पाये। आज भी स्थिति में सुधार नहीं हुआ है। आशातीत मूल्य वृद्धि ने अभावों के स्तर को तो ऊँचा उठा दिया, किन्तु समृद्धि के स्तर को स्वप्निल विषय कर दिया और इनमें सबसे त्रस्त रही नारी।

महिलाओं के विकास में बाधाएँ –

विकास के संदर्भ में महिलाओं के साथ आज तक न्याय किसी भी प्रकार का नहीं हुआ, न सामाजिक न्याय और न आखथक न्याय, न राजनीतिक न्याय। न्याय व महिला ये दो ध्रुव ही रहे, नदी के दो किनारे, जो साथ–साथ चलते हैं, किन्तु कहीं मिलते नहीं। इस संदर्भ में स्वतंत्र भारत की विशेष त्रुटियाँ रहीं –

1. **महिला विकास दर्शन नीति तय नहीं –** (अ) प्रारम्भ से 'महिला' को विशेष चाहिये था क्योंकि यह प्रारम्भ से ही शोषित जीवन के रूप में पुरुष के साथ पूर्ण दासत्व भाव से चेरी व भृत्या समान भार्या नाम से चली आ रही थी। विधिक समानता जो भारतीय संविधान की धारा 14,15,16 के अन्तर्गत दी गई, वह अर्थहीन ही थी, क्योंकि महिलाओं को यह अर्थहीन अधिकार देने का कोई लाभ नहीं था।

2. **आखथक विकास नीति तय नहीं–** महिला का उत्थान तब था, जबकि पीछे से उनको आगे लाया जाता। भेदभाव व समानता का अर्थ तो तब होता है, जबकि समाज में सब का स्तर एक हो और सब समानता के क्षितिज पर रह रहे हों, किंतु जब महिला के साथ तो विषमता थी, पिछड़ापन था, दासत्व भाव था, हर क्षेत्र में असमानता थी, तो फिर भेदभाव न करने व समानता का व्यवहार दर्शन अर्थहीन था, जो 50 वर्षों के अनुभव ने बता दिया कि वास्तव में यह प्रावधान महिला संदर्भ में अर्थवान न होकर अर्थहीन रहा।

3. **रोजगार के समान साधन–** भारतीय संविधान ने रोजगार के समान श्रम समान साधनों का प्रावधान किया, किंतु रोजगार के लिये सामानय व तकनीक शिक्षा की आवश्यकता थी, तभी रोजगार के क्षेत्र में समानता का अर्थ था, किन्तु जब शिक्षा के क्षेत्र में महिला

वर्ग का स्थान नगण्य रहा, तो रोजगार समानता के अधिकार का अर्थ ही महत्वहीन रहा। समग्र भारतीय समाज के लिये यह आवश्यक था कि पुरुषों के साथ महिलाओं का समग्र बौद्धिक विकास होता, जो कि शिक्षा से संभव था। किन्तु महिला शिक्षा के लिये समुचित योजनाबद्ध कोई कार्यक्रम ही लागू नहीं किया गया। पंचवर्षीय योजनाओं में अलग से 'नारी कर्म कौशल' के लिये कोई कार्यक्रम ही समाहित नहीं किये गये, जिससे कि महिला शिक्षा का सोद्देश्य लक्ष्ययुक्त क्रमबद्ध विकास होता।

दुःखद पक्ष यह भी रहा कि शिक्षा को साक्षरता का पर्यायी माना और शिक्षा विकास के स्थान पर अनौपचारिक शिक्षा कार्यक्रमों के माध्यम से साक्षरता के लक्ष्य पाने का उद्देश्य निहित कर दिया। रोजगार के संदर्भ में औपचारिक माध्यमिक व उच्च शिक्षा की आवश्यकता थी, तकनीकी शिक्षा की अपरिहार्यता थी, उससे महिला वर्ग को वंचित रखा और साक्षरता तक ही सीमित कर दिया।

4. **शिक्षा का अभाव–** यही नहीं भारतीय स्वतंत्रता के वेद समान संविधान में प्राथमिक शिक्षा को 10 वर्ष में प्राप्त करने का लक्ष्य रखा गया था, जो आज पचास वर्ष में भी पूरा नहीं हुआ। आज भारत का महिला जगत शिक्षा तो क्या निरक्षरता के अंधकार में 52: तक डूबा हुआ है, जबकि पुरुष तो 38: तक ही निरक्षर है। श्री अमर्त्तय सेन जिनको नोबल पुरस्कार से सम्मानित किया, के अनुसार भारत में महिला विकास की निम्न दर का कारण निरक्षरता व शिक्षा का समुचित अभाव है।

   शिक्षा का जो समान अधिकार महिला वर्ग को व्यवहारिक रूप में नहीं मिला, उसके कारण ही आज महिला वर्ग पिछड़ा है और भारत में विकास की धारा बाधित है व कुन्ठित है।

5. **श्रम शोषण व महिला अधिकार क्षेत्र–** भारतीय संविधान में बाल व महिला श्रम के शोषण के विरूद्ध मूल अधिकार प्रावधित है, किन्तु सरकारी व गैर सरकारी दोनों क्षेत्रों में महिला श्रम का शोषण होता चला आ रहा है। बालिका श्रम शोषण की तो हृदय विदारक कथाएँ हैं। पुरूष को जिन कार्यों की अधिक मजदूरी मिलती है, उन कार्यों के लिये महिलाओं को कम मजदूरी मिलती है, जबकि गुणवत्ता व गति के संदर्भ में महिलाओं का श्रम कौशल पुरुष की तुलना में उच्च कोटि का रहा। कलात्मक क्षेत्र में तो महिला श्रम का कौशल अधिक सकारात्मक परिणाम देता है।

SHIKSHA SAMVAD
PASSION TOWARDS EXCELLENCE

महिला श्रम व तकनीकी शिक्षा

समाज में कुछ तकनीकी श्रम क्षेत्र ऐसे रहे हैं, जो विशेषकर महिलाओं की ही रूचि के क्षेत्र हैं। शिल्प क्षेत्र में महिलाओं की सुरूचिता व सौंदर्यप्रियता अधिक गुणवत्ता व गति लिए होती है। यदि वस्त्र बुनाई, छपाई, हस्तकला के कलात्मक क्षेत्र खिलौने पाकशाला क्षेत्र–ऐसे क्षेत्र हैं, जिनमें महिला शिल्प अधिक उत्पादकता प्रिय है। जहाँ जिस क्षेत्र में कच्चा माल उपलब्ध हो, वहाँ रचनात्मक शिल्प में महिलाओं को प्रशिक्षण दिया जाता, तो वे अधिक कुशलता व तत्परता से कार्य करतीं। आज भी टंकण कार्य, सचिव कार्य व क्रय–विक्रय केन्दों पर महिलाएं अधिक सक्रियता से कार्य करती दिखाई देती हैं। पाश्चात्य क्षेत्र में श्रम का ऐसा कोई पक्ष नहीं जहाँ पुरूषों के समान महिलाएं कार्य न करती हों। वे धरती पर गाड़ी चलाने से लेकर आकाश में हवाई जहाज तक उड़ाने का कार्य करती हैं। महिलाओं की श्रम प्रतिबद्धता व कर्मठता का कोई विकास नहीं किया गया। इस कारण आज भारत 'विकास क्षेत्र में' प्रभावी आखथकता को लेकर जी रहा है और आयात व निर्यात क्षेत्र में पिछड़ा है तथा कदाचित आखथक उपनिवेशवाद जिसका शिकार रूस रहा है, वही भारत को भी परतंत्र होकर न कर जाये।

अस्पष्ट नीतियों व कार्यपालिका की उपेक्षा तथा प्रशासन की असहिष्णुता से महिलाओं का विकास नहीं हो पाया। महिलाओं को सरकारी क्षेत्र में, जो भी नौकरियाँ मिलीं, वे चतुर्थ श्रेणी व अन्य सहायक श्रम साध्य मिलीं। नीति निर्धारण के संदर्भ में महिलाओं को नगण्य अवसर दिये गये। मृत कर्मचारी आश्रित नियम व आकस्मिक दुर्घटना नियम बनाकर महिलाओं के आंसू पोछे गये, किन्तु उनको समग्र आखथक विकास का कोई नीतिगत मंच उपलब्ध नहीं कराया गया। आखथक क्षेत्र में नारी का पिछड़ापन नारी को मुख्य भूमिका निर्वहन से वंचित करता रहा और सामाजिक व आखथक संदर्भ में नारी पुरुष सेविता व पुरुष सेविका बन कर आदर्श भारतीय नारी के पद पर आरूढ़ होकर जीती चली आ रही है। प्रशासन तो नारी विकास में जब सहायक होता, तब कि नारी विकास का संगठनात्मक ढांचा तैयार कर केवल मात्र नारी विकास का ही कार्यक्रम दिया जाता और उसका प्रशासनिक सबल उत्तरदायित्व प्रबुद्ध महिला वर्ग को ही दिया जाता। भारतीय प्रशासनिक व्यवस्था में महिला विकास व उत्थान के लिये कोई भी विशेष कार्यक्रम व संगठन तैयार नहीं किया गया और न स्वतंत्र प्रशासनिक प्रशासन ने विशेष रूप से नारी विकास के सन्दर्भ में कोई भूमिका निर्वहीत नहीं की और प्रशासन असहिष्णु बनकर कार्य

करता रहा। महिला कल्याण महिला सामाजिक न्याय जैसे नारे व वाद–संवाद /परिचर्चा जैसे कार्यक्रमों की भूमिका को रेखांकित कर नारी जगत् को धोखा दिया जाता रहा। नारी विकास के संदर्भ में कोई उल्लेखनीय योगदान कार्यपालिका की प्रशासनिक व्यवस्था का नहीं रहा। ऐसा सहज निष्कर्ष निकलता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. प्रो0 के0एल0 गुप्ता : भारत का आर्थिक विकास।
2. डॉ0 मामोरिया : भारतीय अर्थशास्त्र।
3. बाबा, डी0एस0 : रुरल प्रॉजेक्ट प्लानिंग।

4- कृपा शंकर, डी0एस0 : इकोनोमिक डेवलोपमेन्ट एवं प्रगति के सिद्धांत

5- Rekha Mehra : The Neglet of women in India's Rural Development Programme.

6- Agarwal, Beng : Work participation or Rural woman in the third world-Institute of Development studies Sussex 1981.

7. मामोरिया एवं जैन : भारतीय अर्थव्यवस्था

8- भारत 2004 : सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार

9- Bhotia Anuradha: Women employees and Rural Development Problems of employed women in Rural Areas, Gian Publishing House, New Delhi 1982

SHIKSHA SAMVAD
PASSION TOWARDS EXCELLENCE

SHIKSHA SAMVAD

An Online Quarterly Multi-Disciplinary
Peer-Reviewed or Refereed Research Journal
ISSN: 2584-0983 (Online) Impact-Factor, RPRI-3.87
Volume-01, Issue-03, March- 2024
www.shikshasamvad.com
Certificate Number-March-2024/07

Certificate Of Publication

This Certificate is proudly presented to

कु0 रूबी एवं डॉ0 सुशील कुमार

For publication of research paper title

"महिला विकास कार्यक्रमों के मार्ग में आने वाली बाधायें एवं समस्याए''"

Published in 'Shiksha Samvad' Peer-Reviewed and Refereed Research Journal and E-ISSN: 2584-0983(Online), Volume-01, Issue-03, Month March, Year- 2024, Impact-Factor, RPRI-3.87.

Dr. Neeraj Yadav
Editor-In-Chief

Dr. Lohans Kumar Kalyani
Executive-chief- Editor

Note: This E-Certificate is valid with published paper and the paper must be available online at www.shikshasamvad.com